विक्रम संवाद

पाक्षिक आलेख सेवा/नि:शुल्क वितरण के लिए

सम्पादक
महाराज विक्रमादित्य शोध पीठ
1, उदयन मार्ग, उज्जैन-456010
फोन : 0734-2521499, 0755-2660407
e-mail : mvspujjain@gmail.com
vikramadityashodhpeeth@gmail.com

इस अंक में

पृष्ठ क्र. 1-3
ब्रह्म विद्या का निपुण पंडित था मेघनाथ
प्रमोद भारद्वाज

पृष्ठ क्र. 4-5
विक्रमादित्य के रत्न : विद्वान कवि वररूचि
डॉ. प्रीति पांडे

पृष्ठ क्र. 6-7
राजा भोज जब माता पार्वती की परीक्षा में खरे उतरे
डॉ. पूरन सहगल

पृष्ठ क्र. 8
पुस्तक चर्चा
मिथक मन्थन : व्यंग्य में बेताल कथा
संजीव शर्मा

ब्रह्म विद्या का निपुण पंडित था मेघनाथ

प्रमोद भारद्वाज

राम-रावण युद्ध केवल धनुष-बाण और गदा-भाला जैसे पारम्परिक अस्त्रों तक सीमित नहीं था। बल्कि उस दौर में भी विज्ञान उन्नत था और राम और रावण दोनों के सेना नायकों ने भयंकर आयुधों का खुलकर प्रयोग भी किया था। मेघनाद ब्रह्म विद्या का विशारद था। उसका पांडित्य रावण से भी कहीं बढ़कर था। विस्फोटक व विंध्वसक अस्त्रों का तो इस युद्ध में खुलकर प्रयोग हुआ, जिसमें ब्रह्मास्त्र सबसे खतरनाक था। इन्द्र ने शंकर से राम के लिए दिव्यास्त्र और पशुपतास्त्र मांगे थे। इन अस्त्रों को देते हुए शंकर ने अगस्त्य को चेतावनी देते हुए कहा, 'अगस्त्य तुम ब्रह्मास्त्र के ज्ञाता हो और रावण भी। कहीं अणुयुद्ध हुआ तो वर्षों तक प्रदूषण रहेगा। जहाँ भी विस्फोट होगा, वह स्थान वर्षों तक निवास के लायक नहीं रहेगा। इसलिए पहले युद्ध को मानव कल्याण के लिए टालना?' लेकिन अपने-अपने अहं के कारण युद्ध टला नहीं।

लंका उस युग में सबसे संपन्न देश था। लंकाधीश रावण ने नाना प्रकार की विधाओं को बढ़ावा देने के लिए यथोचित धन व सुविधाएँ भी उपलब्ध कराईं थी। रावण के पास लड़ाकू वायुयानों और समुद्री जलपोतों के बेड़े थे। प्रक्षेपास्त्र और ब्रह्मास्त्रों का अटूट भण्डार व इनके निर्माण में लगी अनेक वेधशालाएँ थीं। दूरसंचार यंत्र भी लंका में उपलब्ध थे। मदनमोहन शर्मा 'शाही' के तीन खण्डों वाले उपन्यास 'लंकेश्वर' में दिए उल्लेखों से यह साफ हो जाता है कि रामायण काल में वैज्ञानिक आविष्कार चरमोत्कर्ष पर थे।

रावण के पास पुष्पक विमान था और रावण सीता को इसी विमान में बिठाकर अपहरण कर ले गया था। गंधमादन पर्वत, गृध्रों की नगरी थी। यहाँ के गृध्रराज भूमि, समुद्री व आकाशीय मार्ग पर भी अधिकार रखते थे। यह नगरी सम्राट संपाती के पुत्र सुपार्श्व की थी। संपाती राजा दशरथ के सखा थे। संपाती वैज्ञानिक था। उसने छोटे-बड़े वायुयानों और अंतरिक्ष यात्री की वेषभूषा का निर्माण किया था। सुपार्श्व ने ही हनुमान को लघुयान में बिठाकर समुद्र लंघन कराकर त्रिकुट पर्वत पर विमान उतारा था। त्रिकुट पर्वत लंका की सीमा परिधि में आज भी है। सुपार्श्व के पास आग्नेयास्त्र भी थे, जिनसे प्रहार कर हनुमान ने नागमाता सुरसा को परास्त किया था। इस अस्त्र के प्रयोग से समुद्र में आग लगी और नाग जाति जलकर नष्ट हो गई। त्रिकुट पर्वत के पहले मैनाक पर्वत था, जिसमें रत्नों की खानें थीं। रावण इन रत्नों का विदेश व्यापार करता था। लंका की संपन्नता का कारण भी यही खानें थीं। सुपार्श्व ने राम-रावण युद्ध में राम का साथ दिया था।

लंका में ऐसे वायुयान भी थे, जो आकाश में खड़े हो जाते थे और आलोप हो जाते थे। इनमें चालक नहीं होता था। ये स्वचालित थे। उस समय आठ प्रकार के विमान थे जो सौर ऊर्जा से संचालित होते थे। रावण पुत्र मेघनाद की निकुम्भिला वेधशाला थी। जिसमें प्रतिदिन एक दिव्य रथ अर्थात एक लड़ाकू विमान का निर्माण होता। मेघनाद के पास ऐसे विचित्र विमान भी थे जो आँख से ओझल हो जाते थे और फिर धुआँ छोड़ते थे। जिससे दिन में भी अंधकार हो जाता था। यह धुआँ विषाक्त गैस अथवा अश्रु गैस होती थी। ये विमान नीचे आकर बम-बारी भी करते थे।

मेघनाद की वेधशाला में 'शस्त्रयुक्त स्यंदन' (राकेट) का भी निर्माण होता था। मेघनाद ने युद्ध में

जब इस स्यंदन को छोड़ा तो यह अंतरिक्ष की ओर बहुत ही तेज गति से बढ़ा। इन्द्र और वरुण स्यंदन शक्ति से परिचित थे। उन्होंने मतालि को संकेत कर दूसरा शक्तिशाली स्यंदन छुड़ाया और मेघनाद के स्यंदन को आकाश में ही नष्ट कर दिया और इसके अवशेष को समुद्र में गिरा दिया।

लंका में यानों की व्यवस्था प्रहस्त के सुपुर्द थी। यानों में ईंधन की व्यवस्था प्रहस्त ही देखता था। लंका में सूरजमुखी पौधे के फूलों से तेल (पेट्रोल) निकाला जाता था (अमेरिका में वर्तमान में जेट्रोफा पौधे से पेट्रोल निकाला जाता है।) अब भारत में भी रतनजोत के पौधे से तेल बनाए जाने की प्रक्रिया में तेजी आई है। लंकावासी तेल शोधन में निरंतर लगे रहते थे। लड़ाकू विमानों को नष्ट करने के लिए रावण के पास भस्मलोचन जैसा वैज्ञानिक था, जिसने एक विशाल 'दर्पण यंत्र' का निर्माण किया था। इससे प्रकाशपुंज वायुयान पर छोड़ने से यान आकाश में ही नष्ट हो जाते थे। लंका से निष्कासित किये जाते वक्त विभीषण भी अपने साथ कुछ दर्पण यंत्र ले आया था। इन्हीं 'दर्पण यंत्रों' में सुधार कर अग्निवेश ने इन यंत्रों को चौखटों पर कसा और इन यंत्रों से लंका के यानों की ओर प्रकाश पुंज फेंका जिससे लंका की यान शक्ति नष्ट होती चली गई। बाद में रावण ने अग्निवेश की इस शक्ति से निपटने के लिए सद्धासुर वैज्ञानिक को नियुक्त किया।

कथित बुद्धिजीवियों और पूजा-पाठियों द्वारा रामायणकाल की इन अद्भुत शक्तियों को अलौकिल व ऐन्द्रिक कहकर इनका महत्व ही समाप्त करने का षड्यंत्र किया है। जबकि ये शक्तियाँ ज्ञान का वैज्ञानिक बल थीं। राम द्वारा सेना के साथ लंका प्रयाण के समय द्रुमकुल्य देश के सम्राट समुद्र ने रावण से मैत्री होने के कारण राम को अपने देश से मार्ग नहीं दिया तो राम ने अगस्त्य के अमोध अस्त्र (ब्रह्मास्त्र) को छोड़ दिया। जिससे पूरा द्रुमकुल्य (मरूकान्तार) देश ही नष्ट हो गया। यह अमोध अस्त्र हाइड्रोजन बम अथवा एटम बम ही था। मेघनाद की वेधशाला में शीशे (लेड) की भट्टियाँ थीं। जिनमें कोयला और विद्युत धारा प्रवाहित की जाती थी। इन्हीं भट्टियों में परमाणु अस्त्र बनते थे और नाभिकीय विखण्डन की प्रक्रिया की जाती थी।

युद्ध के दौरान राम सेना पर सद्धासुर ने ऐसा विकट अस्त्र छोड़ा जो संभवत: ब्रह्मास्त्र से भी ज्यादा शक्तिशाली था, जो सुवेल पर्वत की चोटी को सागर में गिराता हुआ सीधे दक्षिण भारत के समुद्र में गिरा दिया। सद्धासुर का अंत करने के लिए अगस्त्य ने सद्धासुर के ऊपर ब्रह्मास्त्र छुड़वाया। जिससे सद्धासुर और अनेक सैनिक तो मारे ही गए लंका के शिव मंदिर भी विस्फोट के साथ ढहकर समुद्र में गिर गए। दोनों ओर प्रयोग की गई ये भयंकर परमाणु शक्तियाँ थीं। इस सिलसिले में डॉ. चांसरकर ने ताजा जानकारी देते हुए अपने लेख में लिखा है, पांडुनीडि का भाग या इससे भी अधिक दक्षिण भारत का भाग इस परमाणु शक्ति के प्रयोग से सागर में समा गया था और राम द्वारा 'करूणागल' के स्वर्ण और रत्नों से भरे शिव मंदिर, स्वर्ण अट्टालिकाएं भीषण विस्फोटों से सागर में गिर गईं। इन विस्फोटों से लंका का ही नहीं अपितु भारत का भी यथेष्ठ भाग सागर में समा गया था और लंका से भारत की दूरी उस भू-भाग के नष्ट होने से बढ़ गई थी। नल-सेतु (जल डमरूमध्य) का भाग भी रक्ष रणनीतिज्ञों ने नष्ट कर दिया होगा। यही कारण है कि त्रिकुट पर्वत की चोटियाँ भी तिरूकोणमल के भाग के साथ लंका के सागर में समा गईं होंगी और समुद्र भी गहरा हो गया होगा। इसका कारण यह भी हो सकता है कि युद्ध के बाद अवशेष बम आदि सामग्री को नष्ट करने के लिए अगस्त्य ने समुद्र में ही विस्फोट कराकर लंका से विदा ली हो, जिससे सागर गहरा हो गया। क्योंकि बाल्मीकि रामायण में 'उथले उदधि और यहां नावें नहीं चल सकती' का उल्लेख हनुमान करते हैं।

गहरे पानी पैठकर पनडुब्बियों से तिरूकोणमलै के रामायणकलीन शिव मंदिरों के कई अवशेष खोज निकाले हैं। डिस्कवरी चैनल द्वारा इन अवशेषों का बड़ा सुंदर प्रस्तुतिकरण किया गया है। अब तो अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी 'नासा' ने त्रेतायुगीन इस ऐतिहासिक पुल को खोज निकाल कर इसके चित्र भी दुनिया के सामने प्रस्तुत कर दिए हैं। शोधों से पता चला है कि पत्थरों से बना यह पुल मानव निर्मित है। इस पुल की लंबाई लगभग तीस किलोमीटर बताई गई है। जब रावण अपने अंत समय से पहले वेधशाला में दिव्य-रथ के निर्माण में लीन था तब अग्निवेश ने अग्निगोले छोड़कर वेधशाला और उसके पूरे क्षेत्र को नष्ट करने की कोशिश की। ये अग्निगोले थर्माइट बम थे, जिसके प्रहारों से इस्पात की मोटी चादर तक क्षण मात्र में पिघल जाती थी। लंका के हेम मंदिर, हेमभूषित इन्हीं अग्निगोलों से पिघली थी। रावण के प्राणों का अंत जब अगस्त्य का ब्रह्मास्त्र नहीं कर सका तो राम ने रावण पर ब्रह्मा द्वारा आविष्कृत ब्रह्मास्त्र छोड़ा, जो बहुत ही ज्यादा शक्तिशाली था। इससे रावण के शरीर के अनेक टुकड़े हो गए और वह मृत्यु का प्राप्त हो गया।

इस विश्व युद्ध में छोटे-मोटे अस्त्रों की तो कोई गिनती ही नहीं थी। ये अस्त्र भी विकट मारक क्षमता के थे। शंबूक ने 'सूर्यहास खड्ग' का अपनी वेधशाला में आविष्कार किया था। इस खड्ग में सौर ऊर्जा के संग्रहण क्षमता थी। जैसे ही इनका प्रयोग शत्रु दल पर किया जाता तो वे सूर्यहास खड्ग से चिपक जाते। यह खड्ग शत्रु का रक्त खींच लेता और चुंबक नियंत्रण शक्ति से धारक के पास वापस आ जाता। लक्ष्मण ने खड्ग को

हासिल करने के लिए ही शंबूक का वध किया था।

लंका के द्वार पर 'दारू पंच अस्त्र' स्थापित थे। इनका अविष्कार शुक्राचार्य भार्गव ने किया था। जिसे 'रुद्र कीर्तिमुख' का नाम भी दिया गया था। इस यंत्र की विशेषता थी कि जो गतिविधि शत्रु करता था, उसका पूरा चित्र इस यंत्र पर उभर आता था और इसके मुख से अग्निगोला निकलता और शत्रु का संहार करता। यह कीर्तिमुख संभवत: यंत्र मानव था। रावण धारावाहिक में सुमाली जब सुमाली लाट लौट रहा होता है तब इंद्र सुमाली की गतिविधियों को इसी 'कीर्तिमुख अस्त्र' से देखते हैं और सुमाली के संहार के लिए अग्निगोला छोड़ते हैं। इसी वक्त इस घटना को शिव देख रहे होते हैं और वे सुमाली की रक्षा के लिए इस गोले को बीच में ही नष्ट कर देते हैं।

राम ने वैष्णव चाप पर आग्नेयास्त्र और प्रक्षेपास्त्र चलाये थे, जो भंयकर विस्फोटक के साथ शत्रुओं का नाश करते थे। राम को अग्निवेश ने एक विशिष्ट कांच दिया था जो संभवत: दूरबीन था। इसी दूरबीन से राम ने लंका के द्वार पर लगे 'दारूपंच अस्त्र' को देखा और प्रक्षेपास्त्र छोड़कर नष्ट कर दिया। जब कुंभकर्ण और लक्ष्मण के बीच संग्राम चल रहा था, तब लक्ष्मण ने कुंभकर्ण पर मानवास्त्र छोड़ा, जिसे कुंभकर्ण ने कांचनमालिनी शक्ति से नष्ट कर दिया। इस शक्ति की विशेषता थी कि इसे छोड़ते ही आठ घंटियाँ मधुर ध्वनि उत्पन्न करती हुईं बजती थीं, ये घंटियाँउतत्काल सौर ऊर्जा ग्रहण करती थीं। यह शक्ति वायुवेग से चलती थी और सौर मण्डल की विद्युत स्वत: उत्पन्न होती थी। इस अस्त्र से जीवित बचना मुश्किल ही था, क्योंकि शत्रु शरीर में विद्युत धारा प्रवाहित हो जाने के कारण शत्रु का अंत हो जाता था।

कुंभकर्ण अपने कंठ में 'जीवन रत्न वलय' पहनता था। इस यंत्र की विशेषता थी कि इससे लौ की चकाचौंध करती हुई किरणें निकलती थीं, उनके कारण शत्रु के अस्त्र ठहर नहीं पाते थे। लक्ष्मण ने जब कुंभकर्ण पर 'अर्धनाराच' छोड़ा तो कुंभकर्ण ने 'अर्धनाराच' को इसी वलय से किरणें निकाल कर नष्ट किया। लक्ष्मण ने शंबूक से प्राप्त करने के लिए अस्त्र 'चंद्रहास खड्ग' का भी कुंभकर्ण पर बार किया, जिसे कुंभकर्ण ने शूल के प्रहार से काट दिया। बाद में कुंभकर्ण ने लक्ष्मण पर 'मोक्खशक्ति' छोड़ी जिसका प्रतिकार लक्ष्मण के पास नहीं था और लक्ष्मण घायल हो गए।

रामायणों में कुंभकर्ण को ऐसा आलसी निरुपित किया है, जो छह माह सोता रहता था और एक दिन के लिए भोजन आदि के लिए उठता और फिर सो जाता था। जबकि वास्तविकता यह थी कि कुंभकर्ण राष्ट्रभक्त तो था ही, वह एक वैज्ञानिक भी था। वह अपनी वेधशाला में अपनी पत्नी वज्रज्वाला के सहयोग से निरंतर आविष्कार करने में लगा रहता था। ऐसे में वह खाने-पीने की सुध भी भूल जाता था और वेधशाला से कम ही बाहर निकलता। कुंभकर्ण वेधशाला में यंत्र मानव (रोबोट) दारूपंच अस्त्र (राडर) दर्पण (दूरदर्शन जैसा यंत्र) व अणुअस्त्रों के निर्माण में लगा रहता था। कुंभकर्ण ने 'चित्राग्नि' यंत्र का आविष्कार भी किया था। इस यंत्र से पृथ्वी के सभी लोकों की स्थिति को चित्रों के माध्यम से जाना जा सकता था। कुंभकर्ण ने इसे लंबे अनुसंधान के बाद हासिल किया था। कुंभकर्ण की यंत्र मानव कला को 'ग्रेट इन्डियन' पुस्तक में 'विजार्ड आर्ट' का दर्जा दिया है। इस कला में रावण की पत्नी धान्यमालिनी भी पारंगत थी, जो राम-रावण युद्ध के समय गर्भवती थीं। रावण की मृत्यु के बाद धान्यमालिनी ने अरिमर्दन नाम के एक पुत्र को जन्म दिया, जो वीर और प्रतापी था। विभीषण के राज्यारोहण के लगभग बीस साल बाद इसी अरिमर्दन ने विभीषण को पदच्चयुत किया और लंका की पुन: सत्ता संभालकर लंकाधीश कहलाया।

रावण ने जब इस युद्ध का पटाक्षेप करने के लिए निर्णायक लड़ाई लड़ी तो धान्यमालिनी ने राम की सेना पर मकरमुख, आशी विषमुख, वाराह मुख जैसे विंध्वंसकारी अस्त्रों का प्रयोग किया। इन अस्त्रों से छूटने वाले आयुधों में अग्निदीप्तिमुख प्रमुख था। जो छोड़ने पर सौर मण्डल की ओर सीधा जाता, फिर किसी नक्षत्र के समान चमकता और आकाश में ही टूटता। फिर सीधा पृथ्वी की ओर गिरकर शत्रु का नाश करता। अंत में राम ने रावण से छुटकारा पाने के लिए ब्रह्मा का दिया हुआ ब्रह्मास्त्र छोड़ा, जिससे रावण वीरगति को प्राप्त हुआ।

अगस्त्य ने राम के हितार्थ शंकर से 'अजगव धनुष' मांगा था। इस धनुष को मदनमोहन शर्मा 'शाही' ने एक पैटन टैंक माना है। इस धनुष की व्याख्या करते हुए श्री शाही 'लंकेश्वर' में लिखते हैं-'चाप' अभी बंदूक के घोड़े (ट्रेगर) के लिए उपयोग में लाया जाता है। चाप ट्रेगर का ही पर्याय वाची होकर अजगव धनुष है। पिनाक धनुष में ये सब अनेक पहियों वाली गाड़ी पर रखे रहते थे। तब चाप चढ़ाने अथवा घोड़ा (टेऊगर) दबाने से भंयकर विस्फोट करते हुए शत्रुओं का विनाश करते थे।

राम और रावण की सेनाओं के पास भुशुंडी (बंदूक) थी। कुछ सैनिकों के पास स्वचालित भुशुंडियाँ भी थीं। रावण ने एक छत्र का भी निर्माण किया था, जिसे 'ब्रह्म-छत्र' कहा जाता था। संकटकालीन स्थिति में इस छत्र से लंका को ढक दिया जाता था, जिससे लंका में अंधकार हो जाता था और शत्रु को एकाएक लंका दिखाई नहीं देती थी। संभवत: इस छत्र का निर्माण वायुयानों से छोड़े जाने वाले विस्फोटकों से बचने के लिए किया गया होगा।

लंका में दूर संचार यंत्रों का भी निर्माण होता था व चलन

था। दूरभाष की तरह उस युग में 'दूर नियंत्रण यंत्र' था जिसे 'मधुमक्खी' कहा जाता था। जब इससे वार्ता की जाती थी तो वार्ता से पूर्व इससे भिन-भिन की ध्वनि प्रकट होती थी। संभवत: इसी ध्वनि प्रस्फुटन के कारण इस यंत्र का नामकरण मधुमक्खी किया गया होगा। ये यंत्र लंका के विशिष्ठ अधिकारियों और राज-परिवार के लोगों के पास रहते थे। विभीषण की लंकाधीश बनने की उत्कट लालसा थी। इसलिए उसने सीता को भी एक मधुमक्खी यंत्र दे दिया था। जिस पर संवाद जारी रखते हुए सीता ने विभीषण को विश्वासघाती बनाकर अपनी ओर कर लिया। बाद में अशोक वाटिका में मेघनाद ने इस यंत्र को पकड़ लिया और रावण के सामने काका विभीषण के राज्यद्रोही होने की पोल खोल दी। फलस्वरूप रावण ने विभीषण को लंका से निष्कासित कर दिया था। वैसे लंका की संहिता के अनुसार राज्यद्रोह का दण्ड मृत्यु दण्ड था, लेकिन छोटा भाई होने के कारण रावण ने उसे क्षमा दान दे दिया। पर विभीषण इतना कृतघ्न निकला कि वह लंका से प्रयाण करते समय मधुमक्खी और दर्पण यंत्रों के अलावा अपने चार विश्वसनीय मंत्री अनल, पनस, संपाती और प्रभाती को भी साथ, राम की शरण में ले गया और राम की हित पूर्ति के लिए रावण के विरूद्ध इन यंत्रों का उपयोग भी किया।

दर्पण यंत्र अंधकार में प्रकाश का आभाष प्रकट करता था, जिसे ग्रंथों में 'त्रिकाल दृष्टा' कहा गया है। लेकिन यह यंत्र त्रिकालदृष्टा नहीं बल्कि दूरदर्शन जैसा कोई यंत्र था। लंका के दस हजार सैनिकों के पास 'त्रिशूल' नाम के यंत्र थे। जो दूर-दूर तक संदेश का आदान-प्रदान करते थे। संभवत: ये त्रिशूल वायर लैस ही होंगे। लंका में यांत्रिक सेतु, यांत्रिक कपाट और ऐसे चबूतरे भी थे जो बटन दबाने से ऊपर नीचे होते थे। ये चबूतरे संभवत: लिफ्ट थे।

राम-रावण युद्ध में प्रयोग में लायी गयी शक्तियों को मायावी या दैवीय शक्ति कहकर उनके वास्तविक महत्व, आविष्कार के ज्ञान व सामर्थ्य को सर्वथा नकार दिया गया। वास्तव में ये विंध्वंसकारी परमाणु अस्त्र और अद्भुत भौतिक यंत्र थे। इनकी सूक्ष्म और यथार्थ विवेचना के लिए इनके रहस्यों को समझना अभी शेष है। गोया, विश्वविद्यालयों में विभिन्न रामायणों के विज्ञान से जुड़े अंशों को पाठ के रूप में संकलित कर पढ़ाया जाए। इससे विद्यार्थियों में प्राचीन भारतीय विज्ञान को जानने की जिज्ञासा का प्रादुर्भाव उत्पन्न होगा और छात्र उस मिथक को तोड़ेंगे, जिसे कवि की कपोल कल्पना कहकर अब तक उपेक्षा की जाती रही है। इस दिशा में हमारे वैज्ञानिकों और विज्ञान अध्येताओं को भी सकारात्मक पहल करना चाहिए।

विक्रमादित्य के रत्न

विद्वान कवि वररूचि

डॉ. प्रीति पाण्डे

सम्राट विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे वररूचि जो कि संभवत: उसका धर्माधिकारी प्रसिद्ध काव्यकार एवं वैय्याकरण था। वररूचि से सम्बन्धित कई कथानक प्रसिद्ध हैं। इन्हें भारत के अग्रणी विद्वान और कवियों में चिरकाल से स्मरण किया जाता है। इनके कई नाम प्रचलन में थे। त्रिकाण्डशेष कोश के अनुसार उनके कई नाम थे जैसे कात्य, कात्यायन, पुनर्वसु, मेधाजित, वररूचि आदि। कथासरित्सागर में इन्हें श्रुतधर एवं कात्यायन कहा गया है।

ई.पू. द्वितीय शती के महर्षि पतंजलि ने काव्य, कात्यायन तथा वररूचि का सादर स्मरण किया है। भाषावृत्ति में भी पुर्नवसु को वररूचि बताया गया है। महाभाष्य में वररूचि को कात्य के रूप में सादर उल्लेख किया गया है। पतंजलि ने उनके कार्तिक तथा अभिमतों की निरंतर व्याख्या एवं चर्चा की है। वररूचि के काव्य उस काल में इतने लोकप्रिय थे कि 'वाररूचं काव्यम् कहने मात्र से उसका बोध हो जाता था।

वररूचि के विषय में राजशेखर विस्तृत सूचना देते हैं उनके अनुसार वररूचि ने पाटलीपुत्र में आयोजित शास्त्रकार की एक परीक्षा में वे उत्तीर्ण हुये थे।

श्रुयते च पाटलिपुत्रे शास्त्रकार परीक्षा।

अनोपवर्षवर्षाहि पाणिनीपिङगलाविह व्याडि।

वररूचि पतंजलि इह परीक्षिता: ख्यातिमुपजग्यु:।।

उनके अनुसार शिवजी के पुष्पदन्त नामक गण ही अवतार हुये। उनके शाप से कौशाम्बी में एक ब्राह्मण कुल में जन्म लिया और मात्र पाँच वर्ष की अवस्था में ही पितृहीन हो गये थे। ये बहुत ही कुशाग्र बुद्धि थे और एक बार में ही कण्ठस्थ करके याद कर लेते थे। एक बार अकस्मात व्याडि एवं इन्द्रदत्त दो विद्वान उनके घर आए और कौतुहलवशात् व्याडि ने प्रतिशाखा का पाठ किया जिसको वररूचि ने वैसे का वैसा ही दुहरा दिया। इस पर व्याडि और इन्द्रदत्त इनको पाटलीपुत्र ले गये। वहाँ वर्ष और उपवर्ष शिक्षा प्राप्त की। वहीं पाणिनी पढ़ रहे थे जिनको पहले वररूचि ने शास्त्रार्थ में परास्त किया। तदन्तर वे स्वयं भी उनसे परास्त हुये। उपकोशा से विवाह होने पर महाराजा नन्द के मंत्री हुये। महाराजा नन्द की मृत्यु के बाद वे वन चले गये और काणमूति की कथा सुनकर शाप

से मुक्ति पाई। कुमारलाट के 'सूसालंकार' से इनमें से कई बातों का समर्थन होता है। उनके जीवन से सम्बन्धित कई कथाएँ हैं इनमें से एक दण्डी के अवन्ति सुन्दरकथासार के अनुसार है जिसमें यह वर्णित है कि उत्कल में कलापि नामक ब्राह्मण के घर कात्यायनीदेवी की कृपा से एक पुत्री हुई जिसका नाम कात्यायनी था। इसी का पुत्र आगे चलकर कात्यायन कहलाया।

वररूचि से सम्बन्धित एक अन्य कथा मिलती है जिससे वररूचि का न केवल विक्रमादित्य से सम्बन्धित स्थापित होता है वरन् एक अन्य नवरत्न कालिदास से उसकी समसामयिकता भी सिद्ध होती है। यह कथा विक्रमादित्य की पुत्री या बहन विद्योत्तमा एवं कालिदास के विवाह से सम्बन्धित है। एक बार विद्योत्तमा ने अपने गुरु वररूचि का अपमान कर दिया। गुरु ने प्रण किया कि वे उसका विवाह किसी वज्रमूर्ख से ही करवायेंगे। इधर विद्योत्तमा और राजा की प्रतिज्ञा थी कि जो विद्वान विद्वता में विद्योत्तमा को पराजित कर देगा, वहीं उसका पति होगा।

एक बार जंगल में वररूचि ने एक युवक को देखा जो पेड़ की उसी डाल को काट रहा था, जिस पर वह बैठा था। वे उसे अपने साथ राजधानी ले आये। उसे पट्टी पढ़ा कर ऐसी योजना बनाई गई कि वह राजसभा में विद्वान सिद्ध हो जाये और विद्योत्तमा का उससे विवाह हो जाये। ऐसा ही हुआ, विद्योत्तमा का कालिदास से विवाह हो गया। वास्तविकता ज्ञात होने पर विद्योत्तमा ने अपने पति कालिदास को घर से निकाल दिया। कालिदास ने काली की आराधना की और उनके वरदान से विद्वान और कवि होकर लौटे। तब विद्योत्तमा ने उनका स्वागत किया।

इसी प्रकार एक अन्य कथा भी कालिदास एवं वररूचि के संदर्भ में मिलती है। एक दिन वररूचि जंगल में घूमते-घूमते थक गये थे। पानी नहीं मिला। एक पशुपाल से उन्होंने पानी मांगा। पानी नहीं था। उसने कहा भैंस का दूध पी लो और भैंस के नीचे बैठकर 'करचण्डी' करने को कहा। वररुचि ने किसी भी कोश में 'करचण्डी' शब्द नहीं पढ़ा था। पूछने पर पशुपाल ने दोनों हथेलियों को जोड़कर 'करचण्डी' नामक मुद्रा बताकर भैंस का दूध पिलाया। एक विशेष शब्द बताने के कारण पशुपाल को वररूचि ने अपना गुरु बना लिया। राजप्रसाद में लेजाकर राजकन्या का पाणिग्रहण कराया। वह पशुपाल कालिका जी की आराधना करने लगा और कालिका के प्रत्यक्ष दर्शन होने पर उसे विद्या प्राप्ति हुई और उसका नाम कालिदास हुआ। यह कथा जैन ग्रन्थ 'प्रबन्ध चिन्तामणि' से मिलती है जो कि मेरूत्तुंगाचार्य की रचना है। इसमें यह भी लिखा है कि वररूचि विक्रमादित्य की पुत्री 'प्रियंगुमञ्जरी' को पढ़ाते थे। एक बार कन्या ने गुरु के साथ हास्य किया। क्रोध में आकर वररूचि ने शाप दिया कि तू गुरु का उपहास कर रही है, तुझे पशुपाल पति मिलेगा। कन्या ने कहा कि जो आदमी आपका गुरु होगा उसी से विवाह करूंगी।

इसी आधार पर वररूचि ने उपर्युक्त पशुपाल से कन्या का विवाह कराया। कुछ लोगों का मानना है कि वररूचि का भागनिय (भानजा) सुबन्धु जिसने वासवदत्ता की रचना की थी उज्जैन में विक्रमादित्य के दरबार में था। इस प्रकार वररूचि का उज्जयिनी से सम्बन्ध अत्यनत प्रगाढ़ है।

वररूचि विक्रमादित्य की सभा का अलंकार था। वाररूचतिरूक्त पृष्ठ (42) के अनुसार वररूचि विक्रमादित्य का सभासद और धर्माधिकारी था। इसका गौत्र कात्यायन था। वररूचि स्वयं 'पत्रकौमुदी' नामक अपनी रचना में अपना परिचय देते हुये लिखता है कि वह प्रतिष्ठित शासक विक्रमादित्य के निर्देश पर इसकी रचना कर रहा है। पत्रकौमुदी पत्रलेखन कला पर लिखा गया अनुपम ग्रन्थ है।

'विक्रमादित्य भूपस्य कीर्ति सिद्धेर्निदेशत: ।
श्रीमान वररूचि/मान तनोति पत्रकौमुदीम् ।।'

वररूचि से सम्बन्धित दो अभिलेखीय साक्ष्य भी मिलते हैं-एक का विवरण जिनप्रमसूरि विरचित 'विविधतीर्थकल्प' में मिलता है कि सिद्धसेन दिवाकर की सम्मति से महाराजा विक्रमादित्य की शासन पट्टिका लिखी गई थी जिसको उज्जयिनी नगरी में सम्वत् 1, चैत्र सुदी 2, गुरुवार को 'भाटदेशीय महाक्षपटलिक परमार्हत श्वेतांबरोपासक ब्राह्मण गौतमसुत कात्यायन ने लिखा शा'। जिनप्रभसूरि का सुल्तान मुहम्मद तुगलक के राज्य में बड़ा मान था और उन्होंने स्वयं यह शासन पट्टिका देखी थी।

इसी प्रकार एक पाण्डुलिपि मिली है जिसकी चर्चा एस.एन. मित्रा करते हैं। यह पाण्डुलिपि 'विद्यासुन्दर' से सम्बन्धित है। इसका नाम 'विद्यासुन्दर' उपाख्यान है, जिसमें विचित्र रूप से बंगाली एवं देवनागरी अक्षरों का मिश्रण करके लिखा गया है। इसके लेखक ने वररूचि को महापण्डित बताते हुये लिखा है कि वररूचि ने समस्त संसार के सम्राट विक्रमादित्य के निर्देश पर विद्यासुन्दर प्रसंग काव्य की रचना की।

इति समस्त महीमण्डलाधिप महाराजा विक्रमादित्य
निदेशलस्थ - श्रीमन्महापण्डित- वररूचि- विरचितं
विद्यासुन्दर प्रसङगकाव्यं समाप्तम्।

पं. भगवदत्त जी ने अपने 'भारत के इतिहास' में आचार्य वररूचि को विक्रमादित्य का समकालीन होना सिद्ध किया है।

राजा भोज जब माता पार्वती की परीक्षा में खरे उतरे

डॉ. पूरन सहगल

एक बार उज्जयिनी के नगर नायक भगवान महाकाल, माता पार्वती को संग लेकर जगत भ्रमण के लिए निकले। रात हो गई। माता पार्वती ने देखा राजा भोज हाथ में नंगी तलवार लिये, घोड़े में सवार बड़े चौकन्ने होकर घने जंगल में चले जा रहे हैं। पार्वती माता ने पूछा- 'भगवन, भोज इस प्रकार रात में जंगल में क्यों घूम रहा हैं?'

भगवान मुस्कराये और बोले- 'पार्वती! इस जंगल में एक मानव भक्षी घुस आया है। वह सिंह भी हो सकता है अथवा कोई राक्षस भी। राजा का धर्म है, प्रजा की रक्षा करना। भोज उसी नरभक्षी को मारने के लिए वन में है।'

पार्वती ने कहा- 'भगवन! इसके साथ तो कोई सहायक भी नहीं है। यदि उस नरभक्षी ने अचानक हमला कर दिया, तब क्या होगा? इसकी मदद पर भी कोई नहीं आएगा। यदि भोज बुरी तरह घायल हो गया अथवा हताहत हो गया तब क्या होगा।'

भगवान फिर मुस्कराये और बोले- 'पार्वती भोज धर्मनिष्ठ और कर्तव्यनिष्ठ राजा है। इनके साथ अनेक दुखियों की शुभकामनाएँ हैं। वे सब शुभकामनाएँ ही इसकी अंगरक्षक हैं। इसके झोले में सात रोटियाँ है। पानी का एक पात्र भी है, अर्थात् यह सात दिन की व्यवस्था करके वन में आया है। नर-भक्षी को मारे बिना यह वापस धार नगर में नहीं लौटेगा।'

पार्वती ने कहा- 'ठीक है मैं इसकी परीक्षा लेती हूँ। भगवान ने कहा देखो पार्वती धर्मात्मा पुरुष की परीक्षा नहीं लेना चाहिए। फिर भी तुम्हारा मन यही करने को आतुर है तो करो।'

पार्वती ने तत्काल एक टेगड़ा (श्वान) भोज के मार्ग पर सुला दिया। माता की माया कौन अनुमाने? भोज ने देखा मार्ग में एक श्वान पड़ा है। हिल-डुल भी नहीं रही। देखें क्या बात है। यदि मर चुका हो तो मार्ग से अलग हटा दें। यदि जीवित हो तो निश्चित ही भूखा प्यासा होगा। भोज घोड़े से नीचे उतरे और श्वान की जाँच की। श्वान जीवित था। भोज ने अपने झोले से एक रोटी निकाल कर उसके टुकड़े किये और श्वान को खिलाना शुरू कर दिया। श्वान ने रोटी खा ली। भोज ने पत्तों का दाना बनाकर उसे पानी पिलाया। श्वान उठकर अपने मार्ग पर चल दिया। भोज कुछ देर उसे देखता रहा, फिर जब वह नजर से ओझल हो गया, तब भोज ने लम्बी साँस ली और भगवान को धन्यवाद दिया।

घोड़े पर सवार होकर भोज आगे चल पड़ा। उसके कान और आँखें एकदम चौकस बनी हुई थीं। थोड़ी दूर चलने पर उस गाय के रम्भाने की आवाज सुनाई पड़ी। भोज अधिक सावधान हो गये। आवाज का अनुसरण करते हुए जब वह कुछ दूर चला, तब उसने देखा एक गाय दल-दल में फँसी हुई छटपटा रही है। भोज ने घोड़ा रोका और सावधानी रखते हुए दल-दल में घुस गया। वस्तुत: वह एक वन सरोवर का किनारा था। गाय घाट के बजाय विपरीत दिशा से भीतर पानी पीने घुसी और कीचड़ में फँस गयी। भोज ने गाय को बाहर निकाला। घाट पर ले जाकर उसे नहलाया। झोले में से दो रोटी निकालकर उसे खिलायी, फिर पानी पिलाया। भोज ने सोचा यह गाय चरवाहे की लापरवाही से यहाँ छूट गयी है। यदि इसे यहीं रहने दिया, तब कोई भी वनैला हिंसक पशु इसे खा जायेगा। भोज ने गाय को अपने साथ ले लिया।

घोड़े पर सवार होकर भोज आगे बढ़ चला। वह मन ही मन सोच रहा था। वह नरभक्षी कहाँ छुपा होगा? निश्चित ही वह सिंह होगा। अब तो उसके लिए पर्याप्त भोजन सामग्री है। उसे तो गंध आ जाना चाहिए। तीन प्राणी एक साथ चल रहे हैं। तभी भोज ने देखा, एक वृक्ष के नीचे एक विकराल आकृति वाला दैत्य, लम्बे-लम्बे बाल, डरावना चेहरा और फटे वस्त्र पहने बैठा है। भोज जान गया। यही वह नरभक्षी राक्षस है। भोज ने तलवार को मजबूती से पकड़ लिया और उस दैत्य को ललकारा।

- 'अरे नरभक्षी दैत्य सावधान। आज तू बचकर नहीं भाग पायेगा।' वह विकाल आकृति तो हिली ही नहीं। भोज ने समझा संभवत: वह दैत्य मर चुका है। वह तलवार लेकर पेड़ के नीचे जाकर उसे पुकारने लगा। वह आकृति थोड़ी हिली फिर बोली मैं कोई दैत्य नहीं हूँ। तीन दिनों से भूखा-प्यासा मरणासन्न हूँ। बस्ती के लोग मुझे पागल कहकर परेशान करते हैं। मैं जैसे-तैसे जान बचाकर यहाँ आकर बैठा हूँ। यदि आपके पास कुछ खाने को हो और दो घूँट पानी हो तो मेरे प्राण बचा लो। वरना आगे बढ़ जाओ। कोई वन पशु आकर मेरा फैसला कर देगा।

भोज ने उसे एक रोटी खिलायी थोड़ा पानी पिलाया और अपने साथ ले लिया। उससे कहा तुम गाय को हाँकते हुए मेरे साथ-साथ चलो।

अभी थोड़ी दूर चले थे कि मार्ग में एक युवती खड़ी मिली। सोलह श्रृंगार किये वह विश्व मोहनी जैसी लग रही थी।

भोज ने घोड़ा रोक कर उसका हाल जाना- 'तुम कौन हो और ऐसी काली अंधेरी रात में इस घने वन में क्या कर रही हो?' युवती ने कहा- 'मैं अपने प्रेमी से मिलने यहाँ आयी थी। मैं यहाँ

आयी तब अँधेरा नहीं था। अपने प्रेमी की प्रतीक्षा करते-करते रात हो गयी। वह नहीं आया। मैं यहाँ विवश और भयभीत होकर खड़ी हूँ। आप मुझे अपने घोड़े पर बैठाकर अपने साथ ले चलें। भोज ने कहा 'माता! तुम अवश्य मेरे साथ चलो। प्रात: तुम्हारा न्याय होगा। तुम स्वयं को मेरे साथ पूरी तरह सुरक्षित जानो। भोज ने उसे भी अपने साथ ले लिया।

भोज बहुत विचलित हो उठा। उसके मन में बार-बार यह विचार आ रहा था कि आधी रात बीतने आयी, लेकिन नरभक्षी का पता नहीं चल पाया। अब मैं इस युवती और गाय तथा इस विक्षिप्त व्यक्ति को जंगल में छोड़कर कहीं जा भी नहीं सकता। तभी भोज ने देखा एक वृद्ध एवं एक वृद्धा सामने से चले आ रहे हैं।

भोज ने दोनों का अभिवादन किया और आधी रात में इस घने वन में होने के कारण पूछा। उन्होंने बताया हमें इसी वन के एक गाँव में जाना था। रास्ता भटक गये। इधर-उधर भटक रहे हैं। हम भूखे प्यासे तो हैं ही, बुरी तरह थक भी गये हैं।

भोज ने उन्हें आश्वस्त किया। एक वृक्ष के नीचे डेरा डाला। एक-एक रोटी दोनों को खाने के लिए दी। थोड़ा पानी भी पिलाया। भोज ने उस विक्षिप्त जैसे व्यक्ति से कहा तुम गाय को वृक्ष से बाँध दो। अब हम यहीं विश्राम करेंगे। प्रभात होने पर कोई गाँव-बस्ती दिखेगी तब पर्याप्त भोजन की व्यवस्था हो सकेगी। भोज के पास एक रोटी और थोड़ा सा पानी शेष बचा था। भोज ने रोटी निकाली और चाहा कि इसे खा ले तभी उस युवती ने कहा मुझे भी बहुत जोर की भूख लगी है। प्यास के कारण कंठ में काँटे पड़ रहे हैं। भोज ने वह रोटी उसे दे दी। थोड़ा सा पानी भी पिलाया। अब पात्र में दो घूँट पानी ही बचा था। भोज ने सोचा दो घूँट पानी पीकर मैं अपना गला तर कर लेता हूँ। भोज बहुत संतुष्ट था। इतने प्राणियों के प्राण सुरक्षित हो गये। वह पात्र उस युवती के हाथ से छूट गया। रहा सहा पानी भी धरती पर फैल गया। भोज हँस दिया और कहा- 'माता आप चिंता नहीं करे। वैसे भी मुझे अधिक प्यास नहीं लगी है।

इसी बीच थोड़ी दूर से सिंह गर्जना हो उठी। भोज सावधान हो गया। वह तलवार लेकर गर्जना के पीछे भागा। थोड़ी देर में सिंह का शीश काटकर भोज वापस आ गया। तब तक प्रभात हो गया था।

वृद्ध और वृद्धा ने अपना मूल रूप प्रकट किया- 'भोज! तुम मेरी परीक्षा में सफल हुए। मैं पार्वती हूँ। ये वृद्ध उज्जैन नगर नायक महाकाल भगवान शिव हैं। यह गाय उज्जैन नगरी है। यह विक्षिप्त जैसा लगने वाला व्यक्ति काल भैरव है। वह श्वान काल भैरव का संगी था तथा यह सुन्दरी और कोई नहीं गढ़ कालिका है। यह सब मेरी ही माया थी। तुम्हारे जैसा राजा पाकर उज्जैन और धार धन्य हैं। हम सब तुमसे प्रसन्न है। मन वाँछित वर माँगो।' भोज ने विनयपूर्वक कहा- 'माता आप की कृपा ही मेरा मनवाँछित वर है। 'भोज ने सबको साक्षात् दण्डवत किया और कहा- 'माता मेरे राज्य में सदा सुख व शांति बनी रहे। यही वरदान आप मुझे दें। माता पार्वती ने तथास्तु कहा। सभी देव अन्तर्धान हो गये। भोज सिंह का शीश लेकर धार नगर की ओर प्रस्थित हो गए।

विक्रम स्मृति ग्रंथावली

उज्जयिनी के सार्वभौम सम्राट विक्रमादित्य भारतवर्ष में नवजागरण और उत्कर्ष की एक महत्वपूर्ण धुरी रहे हैं। भारत के इतिहास में राजराज्य के बाद विक्रमादित्य के सुशासन का ही स्मरण किया जाता रहा। भारतीय सांस्कृतिक प्रभामंडल का आदर्श प्रतीक, लोकमान्य सम्राट विक्रमादित्य द्वारा प्रवर्तित विक्रम सम्वत् के दो हजार वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर सिंधिया ओरिएंटल इंस्टीट्यूट द्वारा विक्रम स्मृति ग्रंथ के तीन वाल्यूम (हिन्दी, अंग्रेजी और मराठी) में प्रकाशित किये गये थे। इन वृहत् खंडों का पं. सूर्यनारायण व्यास, रमाशंकर त्रिपाठी, रामचन्द्र श्रीवास्तव, युधिष्ठिर भार्गव, हरिहर निवास द्विवेदी द्वारा हिन्दी में, राधाकुमुद मुखर्जी द्वारा अंग्रेजी में तथा माधव श्रीहरि अणे द्वारा मराठी में सम्पादन किया गया था। देश के अग्रगण्य इतिहासकारों, संशोधकों, साहित्यकारों और विद्याविशारदों द्वारा सम्पादित हिन्दी, अंग्रेजी व मराठी में प्रकाशित तीनों ही खंड अत्यंत मूल्यवान और शोधपूर्ण सामग्री से समृद्ध थे और प्राय: हर भाषा में अलग-अलग भी।

अपने विद्वान पूर्वजों द्वारा विक्रम स्मृति ग्रंथावली में विक्रमादित्य, उनके युग तथा भारत विद्या पर एकाग्र प्रकाशित महत्वपूर्ण सामग्री को महाराजा विक्रमादित्य शोधपीठ द्वारा लोकहित में पुनर्प्रकाशित किया जा रहा है ताकि आज की पीढ़ी भी लाभान्वित हो सके तथा विक्रमादित्य को लेकर पश्चिम तथा पश्चिमी रंग में रँगे इतिहासकारों द्वारा फैलाये गये भ्रम का निवारण हो सके। शोधपीठ द्वारा विक्रम स्मृति ग्रंथावली में संग्रहीत सामग्री को अविकल, बिना किसी संशोधनादि के प्रकाशित किया जा रहा है। चूंकि विक्रम ग्रंथावली आज से कोई 80 बरस पहले प्रकाशित हुई थी तब से लेकर आज तक सम्राट विक्रमादित्य पर बहुतेरे शोध, अनुसंधान, पुरातात्विक आलेख, मुद्रा, मुद्रांक, मूर्ति, स्थापत्य सम्बन्धी प्रमाण भी प्रकाश में आते रहे हैं। शोध पीठ ने ऐसी जानकारी को अद्यतन करते हुए ग्रंथावली में पृथक से संलग्न किया है।

पुस्तक चर्चा/संजीव शर्मा

मिथक मन्थन : व्यंग्य में बेताल कथा

विक्रम बेताल की कथाओं से भारतीय समाज पुरातनकाल से परिचित है. ऐतिहासिक कथाओं को वर्तमान संदर्भों में प्रस्तुत करने का अनोखा प्रयोग पद्मश्री से सम्मानित कवि डॉ. सुरेन्द्र दुबे ने किया है। डॉ. सुरेन्द्र दुबे की पहचान गंभीर व्यंग्यकार की है और मन को छू लेने वाली रचनाओं में सामाजिक विद्रूपताओं को लिखने का साहस रखते हैं. अपनी नवीन पुस्तक 'मिथक मन्थन' में उन्होंने मिथकों को वर्तमान संदर्भों से जोड़ते हुए तीन खंडों में 84 व्यंग्य कविताओं के माध्यम से पठनीय पुस्तक की रचना की है. कवि दुबे लिखते हैं- 'विक्रमादित्य बोले- बेताल! बड़ा सामयिक है तुम्हारा सवाल. अर्जुन ने कहा था-गुरुवर, आप क्यों मुझे बहला रहे हैं? पेड़ पर जो बैठा है, उसे चिड़िया बता रहे हैं? मैं तो देख रहा हूं, पेड़ पर उगी हुई रोटियों की भाषा, समस्याओं के समीकरण, आतंक के लम्बे चरण, पेड़ की अखंडता पर उगे हुए छाले, और शाखाओं पर विदेशी मकड़ियों के जाले, मैं देख रहा हूँ पेड़ की डाल पर दो सुलगती आँखें, जो नोच लेना चाहती हैं, हमारा लालकिला, और ताज, यह बात है स्वयंसिद्ध, गुरुदेव! उस डाल पर चिड़िया नहीं बैठा है गिद्ध, मैं फिर भी तीर चलाता हूँ, ताकि भारत में ना हो पुनः महाभारत। बेताल बोला- राजन, तुमने सही निर्णय दिया, तुम बोले और मैं गया.' सभी व्यंग्य कविताएं देशभक्ति और राष्ट्रवाद की सोंधी खुश्बू से लबरेज हैं. मन को कभी उल्लासित करती हैं तो कभी सोचने के लिए विवश करती हैं और आखिरकार वे सभी कवितायें समय की साक्षी हैं कि हम किस काल में जी रहे हैं और हमारे समक्ष कौन सी चुनौतियां हैं. व्यंग्य एक ऐसा अस्त्र है जो मुस्कराहट के साथ चिंतन की जगह भी उत्पन्न करता है और इस दृष्टि से व्यंग्य कविताओं का यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है.

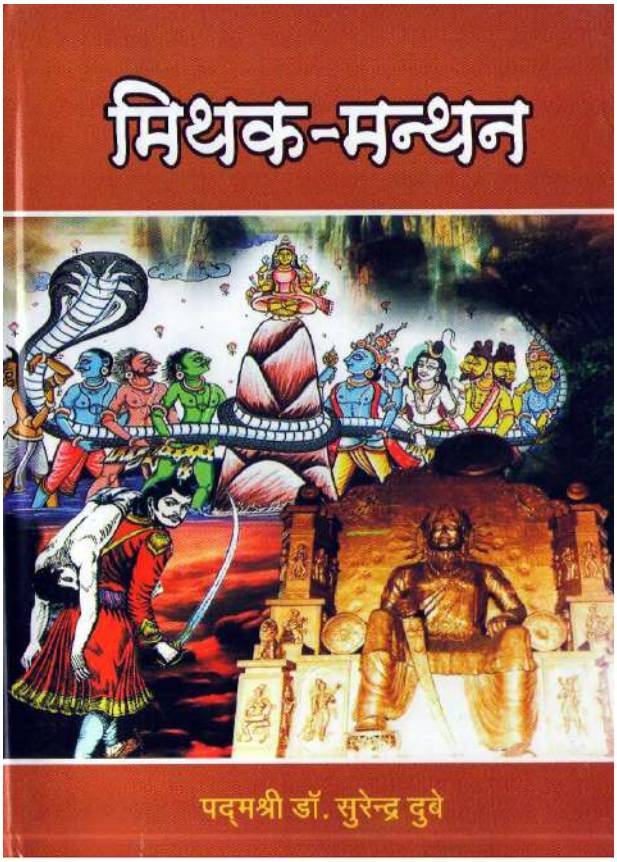

पुस्तक : मिथक-मन्थन

लेखक : पद्मश्री डॉ. सुरेन्द्र दुबे

प्रकाशक : अभिषेक प्रकाशन, विद्युत नगर, सहयोग मार्ग, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

मूल्य : 300/-

'इन रचनाओं में कवि ने नए कथ्य और नए संदर्भों की सृष्टि की है, अतः वह नेपथ्य से प्राचीन किन्तु पृष्ठों पर युगीन हो गया है. विषय-वस्तु की सम-सामयिकता प्रभावित करती है. रचनाकार ने यह सिद्ध कर दिया है कि मान्यताएं बदल चुकी हैं और तौल में अब सेर व मन नहीं, ग्राम व क्विंटल मापदंड के रूप में स्थापित हो चुके हैं.'

-इसी पुस्तक से

महाराज विक्रमादित्य शोध पीठ संस्थान स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग मध्यप्रदेश शासन के लिए 1, उदयन मार्ग, उज्जैन-456010 से प्रसारित. सम्पादक श्रीराम तिवारी. समन्वयक मनोज कुमार.

आलेख सेवा निःशुल्क वितरण के लिए. फोन : 0734-2521499 0755-2660407 e-mail : mvspujjain@gmail.com,vikramadityashodhpeeth@gmail.com